भारतीय दर्शन एवं साहित्य के विकास में प्राकृत वाङ्मय का योगदान

The Contribution of Prakrit Literature for Development of Indian Philosophy & Literature

प्रधान सम्पादक

डॉ. प्रकाश पाण्डेय

सम्पादक

प्रो. श्रीयांश कुमार सिंघई

डॉ. धर्मेन्द्र जैन

राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान (मानितविश्वविद्यालय)

जयपुर परिसर, जयपुर

Scanned with CamScanner

भारतीय दर्शन एवं साहित्य के विकास में प्राकृत वाङ्मय का योगदान

The Contribution of Prakrit Literature for The Development of Indian Philosophy & Literature

प्रधान सम्पादक

डॉ. प्रकाश पाण्डेय

सम्पादक

प्रो. श्रीयांश कुमार सिंघई

डॉ. धर्मेन्द्र जैन

सह-सम्पादक

डॉ. सुमत जैन

डॉ. पुलक गोयल

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्

(नैक द्वारा 'अ' श्रेणी-प्राप्त-मानित-विश्वविद्यालयः)

(भारतसर्वकारस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्)

जयपुरपरिसरः, जयपुरम्

Scanned with CamScanner

अनुक्रमणिका

1. प्राकृत वाङ्मय में भाषावैज्ञानिक चिंतन की तात्त्विक मीमांसा 1
वृषभ प्रसाद जैन, लखनऊ
2. आचार्य कुन्दकुन्द कृत नियमपाहुड का दार्शनिक चिन्तन 14
कमलेश कुमार जैन, वाराणसी
3. गोम्मटसार के विशेष सन्दर्भ में जैन कर्म सिद्धान्त : एक तुलनात्मक विवेचन 23
फूलचन्द जैन प्रेमी, दिल्ली
4. शौरसेनी प्राकृत वाङ्मय में बौद्ध दार्शनिक अनुचिन्तन 32
विजयकुमार जैन, लखनऊ
5. प्राकृत अभिलेखों में वर्णित दार्शनिक बिन्दु 39
सुदीप जैन, दिल्ली
6. पवयणपाहुडे णाणचिंतणं 46
श्रीयांश कुमार सिंघई, जयपुर
7. प्राकृत वाङ्मय में निहित मूल्यों का लोक जीवन पर प्रभाव 56
प्रेमचन्द्र रांवका, जयपुर
8. उत्तराध्ययनसूत्र-जीवविभक्ति का समीक्षण 62
रामजी राय, आरा
9. आचार्य गुणधर और उनका कषायपाहुड 67
भागचन्द्र जैन भास्कर, नागपुर
10. व्याख्याप्रज्ञप्ति में लोक का स्वरूप 81
दामोदर शास्त्री, लाडनूँ
11. भगवती आराधना – एक सांस्कृतिक निधि 87
प्रेम सुमन जैन, उदयपुर
12. प्राकृत वाङ्मय एवं जैनन्याय परम्परा 9
कमलेश कुमार जैन, जयपुर
13. आचार्य वट्टकेर के मूलाचार का दार्शनिक समीक्षण 10
अशोक कुमार जैन, वाराणसी

Scanned with CamScanner

व्याख्याप्रज्ञप्ति में लोक का स्वरूप

दामोदर शास्त्री

व्याख्याप्रज्ञप्ति (अपर नाम – भगवती सूत्र) द्वादशांगी का पांचवा अंग (आगम) है। विशाल आकार वाले इस आगम में जैन तत्त्वज्ञान के प्राय: सभी पक्ष चर्चित हुए हैं। 'लोक' के स्वरूप के विषय में भी इस आगम में महत्त्वपूर्ण व उपयोगी विवरण प्राप्त होते हैं। इस निबन्ध में उन्हें संक्षिप्त रूप से प्रस्तुत किया जा रहा है।

'लोक' शब्द का अर्थ है – जो देखा जाये (लोक्यते इति लोक:)। व्याख्याप्रज्ञप्ति में कहा गया है कि अजीव (पुद्गल) आदि के विविध परिणामों के द्वारा जिसका लोकन किया जाता है, प्रलोकन किया जाता है, वह 'लोक' है।[1]

अन्य परवर्ती आचार्यों ने भी प्राय: इस अर्थ को स्वीकारा है। उदाहरणार्थ– जहाँ पदार्थ स्थित एवं परिणमित होते देखे जाते हैं, वह 'लोक' है।[2] आचार्य अकलंक आदि आचार्यों के मत में 'जो सर्वज्ञ द्वारा 'केवल ज्ञान' से देखा जाये, वह 'लोक' है।'[3] लोक के सभी पदार्थ अपने त्रैकालिक अवस्थाओं (पर्यायों) सहित सर्वज्ञ जिनेन्द्र के केवलज्ञान रूपी दर्पण में स्पष्ट प्रतिबिम्बित होते रहते हैं,[4] इसलिये इसे 'लोक' कहा जाता है।

षड्द्रव्यात्मक लोक

लोक में स्थित प्रत्येक पदार्थ 'परिणामी नित्य' है, अर्थात् उसमें प्रतिक्षण नवीन-नवीन पदार्थ उत्पन्न होते और विलीन होते हैं, किन्तु 'परिणामी' होते हुए भी अपने स्वरूप से च्युत न होने के कारण वे 'नित्य' कहे जाते हैं।[5] उक्त परिणामिनित्यता वाले पदार्थों को एक नाम से पुकारा जाए तो वह है– 'द्रव्य'। द्रव्य शब्द की निरूक्ति भी यही है कि जो प्रतिक्षण नवीन-नवीन पर्यायों को प्राप्त करता है, वह 'द्रव्य' है।[6] जिस प्रकार समुद्र अस्तित्वहीन (घटता-बढ़ता व नष्ट) नहीं होता, इसी प्रकार अनादिनिधन द्रव्य में पर्यायें उठती व नष्ट होती हैं, किन्त द्रव्य स्वरूपच्युत नहीं होता।[7] द्रव्य को 'सत्' भी कहा गया है।[8] द्रव्य के छ: भेद हैं – जीव, पुद्गल, धर्म (धर्मास्तिकाय), अधर्म (अधर्मास्तिकाय), आकाश व काल।[9] द्रव्य के दो भेद भी माने गए हैं – जीव व अजीव। और अजीव के पांच भेद हैं – पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश व काल।[10] वस्तुत: आकाश और शेष पांच द्रव्यों का समष्टि रूप ही 'लोक' है।[11] इसलिए आचार्यों ने 'लोक' को षड्द्रव्यात्मक कहा है।[12] कुछ

Scanned with CamScanner